महात्मा गाँधी के आर्थिक चिन्तन की नैतिक मीमांशा एवं सर्वोदय

[1]डॉ. रामजीलाल सेठी

शोध सारांश

वर्तमान समय में मानव जीवन में अर्थ-भौतिकता का महत्व अत्यधिक बढ गया है। जितना सम्भवतः पहले कभी नही था। मानव जीवन की प्रत्येक गतिविधि अर्थ केन्द्रित हो गई है। मानव जीवन में अर्थ का महत्व इतना बढ गया है कि अर्थ ही मूल्यों का आधार बन गया है। आपसी संबंधों की प्रगाढता अथवा जीवन में सफलता-असफलता का पैमाना 'अर्थ' बन गया है। सामाजिक, राजनीतिक जीवन में ही नही धार्मिक जीवन में भी अर्थ की प्रधानता अत्यधिक बढ गयी हैं। आर्थिक सम्पन्नता सामाजिक प्रतिष्ठता का परिचायक, राजनीतिक सफलता की पूर्व शर्त तथा आस्था का प्रतिक बन गई है। अधिक दान-दक्षिणा करने वाला ईश्वर का सच्चा भक्त कहलाता है। अर्थ के समक्ष भावनाओं का कोई मुल्य नही है। इसके विपरित महात्मा गाँधी ने जीवन में भौतिकता को अधिक महत्व नही दिया। 'अपरिग्रहणशीलता' का संदेश देते हुए उन्होंने कहा कि शारीरिक कल्याण जीवन का परम लक्ष्य नही है। जो लोग शारीरिक कल्याण को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लेते हैं, ऐसे लोग आसुरी प्रवृत्ति के होते हैं। उनके शब्दों में अतुष्टनीय कामनाओं के वशीभुत होकर एवं कामोपयोग को ही परम पुरुषार्थ मानकर वे विषय भोगों की पूर्ति के लिए अन्यायपूर्वक धनादिक बहुत से पदार्थों का संग्रह करने की चेष्टा करते हैं।' ऐसे लोग स्वकेन्द्रित, स्वार्थी और लालची होते है। गाँधी जी आवश्यकताओं की अनावश्यक वृद्धि के विरूद्ध थे। हम त्याग द्वारा भोग करें। उनका कहना था, मानव शरीर का एकमात्र उद्देश्य सेवा है, भोग कदापि नहीं। सुखी जीवन का रहस्य त्याग में हैं। त्याग ही जीवन हैं। भोग का अर्थ मृत्यु है। गाँधी जी के समस्त क्रिया-कलाप के मूल में नैतिक चिन्तन विद्यमान है और उसी के कारण आधारभूत नैतिक मूल्य उनके आर्थिक विचारों पर हावी रहे है।

मूल शब्द : अर्थ, भौतिकता, आर्थिक व्यवस्था, आर्थिक चिन्तन, अर्थशास्त्र, खद्दर अर्थशास्त्र, अपरिग्रह, सर्वोदय

Corresponding author

डॉ. रामजीलाल सेठी, व्याख्याता, राजनीति विज्ञान

प्रस्तावना

मानव इतिहास के किसी अन्य युग से कहीं अधिक वर्तमान आर्थिक व्यवस्था हमारी अधिकांश गतिविधि को परिलक्षित करती हैं। अर्थात हमारे जीवन में अर्थ का महत्व अत्यधिक बढ गया हैं। हम एक ऐसे संसार में रह रहे है जिस पर आर्थिक शक्तियों एवं आर्थिक विचारोें का जादू हावी है। वस्तुतः आर्थिक व्यवस्था ही इतिहास की धारा को मोडने वाला प्रमुख कारण रही है। प्रो. मार्शल के अनुसार "धार्मिक आदर्श को छोड़कर अन्य किसी भी प्रभाव से अधिक अपने दैनिक कार्यों द्वारा एवं उससे प्राप्त होने वाले भौतिक साधनों द्वारा मानव चरित्र गठित होता रहा है। विश्व इतिहास के निर्माण के दो प्रधान अभिकरण रहे हैं। धर्म एवं आर्थिक व्यवस्था। बीच-बीच में कुछ समय के लिए कहीं-कहीं सैनिक व्यवस्था या कलात्मक चेतना अधिक प्रमुख हो उठी है, किन्तु कहीं भी धार्मिक एवं आर्थिक प्रभाव कुछ समय के लिए भी गौण नहीं बनाये जा सके हैं एवं अन्य समस्त प्रभावों को समुच्चय से भी वे दोनों प्रायः सर्वदा अधिक महत्वपूर्ण रहे हैं। " धार्मिक प्रेरणाएं आर्थिक प्रेरणाओं की तुलना में अधिक उत्कृष्ट रही हैं किन्तु उनका प्रत्यक्ष प्रभाव जीवन के इतने बड़े अंश पर कम ही पड़ता है।'

शरीर की कुछ भौतिक आवश्यकताएं होती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया गया भौतिक साधनों का प्रयोग मानसिक एवं शारीरिक क्रिया-कलाप में परिलक्षित होता है। ये क्रिया-कलाप एक और तो मानव के जीवनोद्देश्य से नियंत्रित होते हैं और उनके सीमित भौतिक साधनों द्वारा सीमाबद्ध करते हैं। अतएव ऐसे कुछ नियम अवश्य होने चाहिए जिनसे ये क्रिया-कलाप शासित होते हांे। ये नियम ही आर्थिक सिद्धान्त की रचना करते हैं। इसी कारण हमारे द्वारा किसी चिन्तक के अर्थनीतिक विचारों का अध्ययन करना महत्वपूर्ण हो जाता है। इस द्वष्टि से महात्मा गाँधी के आर्थिक विचारों का अध्ययन प्रांसगिक है।

महात्मा गाँधी का आर्थिक चिन्तन

गाँधी जी ने आर्थिक व्यवस्था को जीवन के अन्य क्षेत्रों से पृथक नहीं किया। उनके अनुसार आज समस्त मानवीय क्रियाकलाप एक अविच्छेद समग्र की रचना करते हैं एवं सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक एवं विशुद्ध धार्मिक कार्यों को एक-दूसरे से बिल्कुल पृथक नहीं रखा जा सकता। जीवन के प्रति इस समन्वित दृष्टि ने उन्हें आर्थिक व्यवस्था के बारे में भी विचार करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कुछ सिद्धान्त बनाये जिन पर आर्थिक संगठन को आधारित होना चाहिए। यद्यपि गाँधी को सुविदित अर्थ में अर्थशास्त्री नहीं जा कहा जा सकता है तथापि उन्होंने अपने चिन्तन में आर्थिक विषयों का समावेश अवश्य किया और उस चिन्तन में आर्थिक सिद्धान्तों को खोजा जा सकता है।

गाँधी जी के समस्त क्रिया-कलाप के मूल में नैतिक चिन्तन विद्यमान है और उसी के कारण आधारभूत नैतिक मूल्य उनके आर्थिक विचारों पर हावी रहे है। अतएव उनके अर्थशास्त्र का अध्ययन करते समय इस बात को दृष्टिगत रखना अनिवार्य है। अपने आर्थिक विचारों में वे जॉन रस्किन से सर्वथा प्रभावित थे। उन्होंने उनकी कृति 'अन टू दिस लास्ट' का सर्वोदय के नाम से अनुवाद किया और यहीं उनके आर्थिक सिद्धान्त की आधारशिला है। रस्किन की दृष्टि में मनुष्य ही सर्वोपरि विचारणीय तत्व है। गाँधी जी उनका अनुगमन करते है। गाँधी जी के अनुसार अर्थशास्त्र एवं नीतिशास्त्र में बहुत या कुछ अन्तर नहीं किया जा सकता है। गाँधी जी ने कहा "मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं अर्थशास्त्र एवं नीतिशास्त्र में बहुत या कुछ अन्तर नहीं करता। किसी व्यक्ति या राष्ट्र के नैतिक कल्याण को क्षति पहुंचाने वाला अर्थशास्त्र अनैतिक हैं, पापपूर्ण हैं। इसी प्रकार जो अर्थशास्त्र एक देश को दूसरे देश की लूट करने की अनुमति देता है, अनैतिक है। अमेरिकन गेहू खाकर अपने पड़ोसी अनाज के व्यापारी को ग्राहक के अभाव में भूखों मरने देना पीड़ादायक है। वैसे ही रीजेंट स्ट्रीट की नवीनतम तड़क-भड़कदार पोशाक पहनना मेरे लिए पाप पूर्ण है जबकि मैं जानता हूँ कि यदि मैंने अपने पड़ोसी जुलाहों की बुनी पोशाक पहनी होती तो न केवल मेरा तन ढकता बल्कि उनके तन भी ढकते और पेट भी भरते।' '

गाँधी जी अर्थशास्त्रियों के प्रायः समस्त परम्परागत विश्वासों का विरोध करते हैं एवं उनके बारे में अपने विचार प्रकट करते हैं। आरंभ से ही वे इस विचार का खंडन करते हैं कि "सामाजिक मनोभाव के प्रभाव से निरपेक्ष रह कर सामाजिक कार्यकलाप की उपयोगी संहिता बनायी जा सकती है। " अर्थशास्त्रियों के अनुसार सामाजिक मनोभाव मानव प्रकृति के आकस्मिक एवं विशोभकारी तत्व है किन्तु धनलोलुपता एवं प्रगति कामना स्थिर तत्व हैं। अस्थिर तत्वों को छोड़कर एवं मनुष्यों को केवल धन लोलुप एवं यंत्र मानकर हम इसकी विवेचना करें कि श्रम क्रय-विक्रय के किन नियमों द्वारा अधिकतम धन संचय का परिणाम सुलभ हैं। इन नियमों के निर्धारित हो जाने पर प्रत्येक व्यक्ति को यह छूट है कि वह अपने अनुसार जितना चाहे उतना विक्षोभकारी मनोभावात्मक तत्व मिलाये एवं उन नयी परिकल्पित स्थितियों का परिणाम स्वयं निश्चित करें।

इसके चलते अर्थशास्त्री मनुष्य को धन संचय का यंत्र मानने लगे। उनका एकमात्र उद्देश्य धन संचय के उपाय ढूंढना ही रह गया। इसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखकर उन्होने "पूर्ति एवं मांग का नियम' ' चलाया। इस नियम के अनुसार मनुष्य को सबसे अच्छे एवं सबसे सस्ते बाजार में ही खरीदना चाहिए। रस्किन ने इस "व्यापारिक अभिलेख की उग्र आलोचना की थी। उसका तर्क था जहाँ तक मुझे ज्ञात हैं इतिहास में मानव-बुद्धि के लिए इतना लज्जाजनक और कोई अभिलेख नहीं है जितना वह आधुनिक विचार जिसका प्रतिनिधित्व यह व्यापारिक उद्धरण करता है या किन्हीं परिस्थितियों में राष्ट्रीय अर्थनीति के एक उपलब्ध सिद्धान्त के रूप में कर

सकता है कि, "सबसे सस्ते बाजार में खरीदों और सबसे महंगे में बेचो । " एक अन्य स्थान पर उन्होंने कहा था, "मांग एवं पूर्ति के नियमों के अनुसार रहना मछलियों का या चूहों एवं भेडियों का विशेषाधिकार हो सकता हो सकता है किन्तु मानवता की विशिष्टता तो औचित्य के नियमों के अनुसार रहना है।' '

गाँधी जी के अनुसार मांग एवं पूर्ति के सिद्धांत को हम किसी विज्ञान का आधार नहीं बना सकते। उनका मत है, आधुनिक अर्थशास्त्रियों द्वारा निर्मित सर्वाधिक अमानवीय सिद्धांत वाक्यों में से एक हैं न हम किसी ऐसे घृणित विचार से सर्वदा मानव सम्बन्धों को नियंत्रित ही करते हैं। किसी नये सस्ते समान विश्वासी व्यक्ति के लिए अपने पुराने, अधिक वेतन पाने वाले विश्वासी नौकर को निकालना मेरे लिए पाप कर्म होगा। जो अर्थशास्त्र नैतिक एवं भावानात्मक विचारों की उपेक्षा करते हैं, वे उन मोम के पुतलों के समान हैं जो जीवन्त प्रतीत होते हुए भी निर्जीव होते हैं।' '

अपने आर्थिक विचारों की व्याख्या करते हुए महात्मा गाँधी ने कहा, खद्दर अर्थशास्त्र साधारण अर्थशास्त्र से बिल्कुल भिन्न है। खद्दर अर्थशास्त्र का अर्थ है पृथ्वी के प्रत्येक मानव के प्रति बन्धुत्व भाव। इसका अर्थ है ऐसी प्रत्येक वस्तु का परित्याग जिनसे हमारे साथियों को क्षति पॅहुच सकती है। आदि मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती है, मिल का वस्त्र अधिक धात्विकता का प्रतिनिधित्व करता है। " जीवन निर्वाह का स्तर और सुख-जैसा कि हमने देखा है, सामान्यतः पश्चिम की अर्थनीतिक संरचना का लक्ष्य आवश्यकताओं की वृद्धि। इसके अनुसार जितनी अधिक वस्तुओं एवं सेवाओं का उपयोग हम करते हैं, हमारे जीवन निर्वाह का स्तर उतना ही ऊंचा होता है और भौतिक दृष्टि से हम उतने ही सभ्य और सुखी होते हैं। पश्चिमी समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद का स्वरुप यही है। वे सबके सब परिग्रहणशील हैं। गाँधी जी इस तथ्य से अवगत थे और उन्होंने हिन्द स्वराज में लिखा था, आधुनिक सभ्यता की वास्तविक कसौटी इस तथ्य में निहित है कि इसके अन्तर्गत जीवन धारण करने वाले शारीरिक कल्याण को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लेते हैं। ऐसे लोग गाँधी जी के परम मान्य ग्रन्थ गीता के अनुसार आसुरी प्रवृत्ति के होते हैं। उनके शब्दों में अतुष्टनीय कामनाओं के वशीभुत होकर एवं कामोपयोग को ही परम पुरुषार्थ मानकर वे विषय भोगों की पूर्ति के लिए अन्यायपूर्वक धनादिक बहुत से पदार्थों का संग्रह करने की चेष्टा करते हैं।' ' ऐसे अनेक प्रकार के विचारों से भ्रमित होकर मोह रूपी जाल में फंसकर विषयभोगों में अत्यंत आसक्त व्यक्ति अपवित्र नरक में जा गिरता है।

भारतीय आदर्श के प्रति निष्ठावान गाँधी जी इसका प्रतिवाद करते हुए तर्क करते है कि मन चंचल पक्षी के समान है, जितना अधिक इसको मिलता है, उतना ही अधिक यह चाहता है फिर भी तुष्ट नही रहता है। जितना ही हम अपनी वासनाओं में डूबते हैं, उतनी ही अनिंयत्रित हो जाती हैं। उन्होंने आगे कहा है, अतएवं हमारे

पूर्वजों ने विषयभोग की एक सीमा निर्धारित कर दी। उन्हें ज्ञात था कि सुख मानसिक स्थित है। कोई व्यक्ति धनी होने के कारण अनिवार्यतः सुखी नहीं होता या गरीब होने के कारण ही दुखी नहीं होता। प्रायः देखा जाता है कि धनी दुःखी है और गरीब सुखी। इन सबका अनुभव करके ही हमारे पूर्वजों ने हमें भोग-विलास से दूर रहने का ज्ञान दिया था। ऐसा नहीं था कि वे यंत्रों का आविष्कार करना नहीं जानते थे बल्कि हमारे पूर्वज जानते थे कि यदि हमने ऐसी आवश्यकताओं की पूर्ति के पीछे अपना मन दौड़ाया तो हम उनके गुलाम हो जायेंगे और अपनी नैतिक प्रकृति खो बैठंेगे। अतएव पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद उन्होंने निश्चित किया कि हमें वही करना चाहिए जो हम अपने हाथों और पैरो से कर सकते हैं। मैं इस पर विश्वास नहीं करता कि आवश्कताओं की वृद्धि और उनकी पूर्ति के लिए यंत्रों के प्रयोग द्वारा विश्व अपने लक्ष्य की ओर एक कदम भी आगे बढ़ सका है। दूरी और समय के व्यवधान को नष्ट कर उसकी पाशविक क्षुधाओं को बढ़ाने और उनकी तृप्ति के लिए पृथ्वी के इस छोर से उस छोर तक भटकने के पागलपन भरे सिद्धान्त से मैं पूरे अंतःकरण से घृणा करता हूँ।

गाँधी जी की दृष्टि में समस्त आर्थिक व्याधियों की जड़ है आधुनिक सभ्यता की सदा बढ़ती जाने वाली और आगे की प्रवृत्ति। वे थमने लिए सचेत करते हैं और जैसा कि लुई फिसर ने कहा है, 'रूको और बचो' उनके अर्थ दर्शन का प्रमुख लक्ष्य है, इसलिए उनका आदर्श है 'सरल जीवन और उच्च विचार' और इसीलिए वे आवश्यकताओं की अनावश्यक वृद्धि के विरूद्ध है। उनका कथन है, जिस क्षण वह सरल जीवन एवं उच्च विचार के आदर्श के पालन से अलग हो जाता है। इसके प्रचुर प्रमाण उपलब्ध है। मनुष्य का सुख वस्तुतः संतोष में निहित है। जो असंतुष्ट रहता है वह अपनी कामनाओं का दास बन जाता है। सभी सन्तों ने उच्च स्वर में घोषित किया है कि मनुष्य अपना निकृष्टतम शत्रु भी बन सकता और उत्कृष्टतम मित्र भी। स्वतंत्र रहना या दास बन जाना उसकी अपनी मुट्ठी में है। "

वे चाहते हैं कि हम उन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयास करें जो हमारे समुचित जीवन के लिए बहुत जरूरी हो। वे मानते हैं कि इस शरीर को परमात्मा ने हमें सौंपा है। अतः यह हमारा कर्तव्य है कि हम इसे दुरुस्त रखें तथापि आवश्यकताओं की वृद्धि करना किसी के लिए उचित भी नहीं कहा जा सकता। ये उपनिषद की उक्ति पर विश्वास करते थे और चाहते थे कि हम त्याग द्वारा भोग करें। उनका कहना था, मानव शरीर का एकमात्र उद्देश्य सेवा है, भोग कदापि नहीं। सुखी जीवन का रहस्य त्याग में हैं। त्याग ही जीवन हैं। भोग का अर्थ मृत्यु है। इससे किसी को यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि महात्मा गाँधी लोगों को वैरागियों का जीवन यापन करने को कहते हैं। हम पहले ही इसका विवेचन कर चुके हैं कि महात्मा गाँधी का मत था कि समाज उन समस्त सुख-सुविधाओं का उपयोग करें जिनसे मानव जीवन सुखद और उसकी जीवन यात्रा सुगम हो। वे बिजली, जहाज निर्माण, लौह उद्योग, यंत्र निर्माण तथा इसी प्रकार की अन्य वस्तुओं को जीवन के लिए

उपयोगी मानते थे। वे इनके विरूद्ध नहीं थे किन्तु चाहते थे कि हम इन दो बातों पर विचार करें, समस्त समाज का अधिकतम कल्याण हमें सदा सचेत रहना होगा कि कहीं हम दूसरों की कीमत पर तो अपनी आवश्यकताएं नहीं बढ़ा रहे, हमारे जीवन का उद्देश्य इसका अर्थ यह है अपनी भौतिक आवश्यकताओं की वृद्धि की उन्मादग्रस्त दौड़ में हम जीवन का वास्तविक उद्देश्य ही न भूल जायें। इन दोनों शर्तो का निर्वाह करने पर हम वास्तविक एवं कृत्रिम आवश्यकताओं को कम कर सकते हैं। गाँधीवाद चाहता है कि लोग अच्छी तरह रहें। उसकी यह मांग नहीं है कि लोग एकान्त में सन्तों की तरह रहे, उसकी मांग है कि वे कम स्वार्थी हों, कम लोभी हों, कम धनोन्मादी हों, कम स्वकेन्द्रिक हो। महात्मा गाँधी ने अपरिग्रह तथा त्यागमय उपभोग के संदेश को अपने जीवन में चरितार्थ किया। आधी धोती को स्वीकार करने के पीछे महात्मा गाँधी की सोच यह थी कि जब देश के अधिकांश लोगो के पास तन ढकने के पुरा वस्त्र नही है तो मुझे पूरे वस्त्र पहनने का कोई अधिकार नही है।

गाँधी जी के आर्थिक चिंतन की मूल धारणाएं

गाँधी जी के विचार में भारतीय अर्थव्यवस्था पर गाँवों की दृष्टि से विचार किया गया है। उसमें खेती और उद्योग का परस्पर निकट सम्बन्ध दोनों सामान्य रूप से एक ही छप्पर के नीचे रहते है। इस अर्थव्यवस्था का विचार इस तरह किया गया है जिससे विविध धर्म, संस्कारों और सभाओं वाले लोगों में हित, विरोध, कलह और अनुचित स्पर्धा पैदा न हो। अतः इसे नीति धर्म के हर कदम पर निगाह के सामने रखकर सर्वोदय करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार गाँधी जी के आर्थिक चिंतन की मूल धारणाएं निम्नलिखित हैं-

I. ये विचार सामाजिक न्याय और नैतिक मूल्यों पर आधारित है, इनके लिए सच्चा अर्थशास्त्र अर्थ का न्याय है।
II. ये विचार मानव तथा उनके कल्याण पर आधारित हैं।
III. इन विचारों में अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र दो भिन्न सतायें नहीं, जो अर्थशास्त्र राष्ट्र के कल्याण को हानि पहुंचाता है, वह अनैतिक है इसलिए अधर्म है। गाँधी जी के अर्थशास्त्र का मानदंड नैतिक मर्यादा है।
IV. ये विचार सरलता पर आधारित है। इनका आदर्श सादा स्वस्थ और संयत जीवन हैं। इनमें आवश्यकताओं को बढ़ाने के स्थान पर कम करने पर बल दिया जाता है। ये नैतिक विकास के लिए भौतिक विकास को सहायक नहीं मानते।
V. ये विचार मानवता के विचारों से भरे पड़े हैं। इनमें अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, मनोविज्ञान और धर्म घुले-मिले हैं।

VI. ये विचार सम्पत्ति का समान वितरण चाहते हैं परन्तु व्यवहारिक कठिनाइयों के कारण न्यायोचित वितरण का प्रयास करते हैं। ये व्यक्ति को अभाव से मुक्ति दिलाना चाहते हैं और उसकी अनिवार्य आवश्यकताएं - रोटी, कपड़ा, मकान पूरी करना चाहते हैं।

VII. ये विचार वर्तमान सभ्यता को लोभ और शोषण पर आधारित मानते हैं। इसके लिए वर्तमान सभ्यता मिथ्या है।

गाँधी जी का आर्थिक दर्शन - सर्वोदय

गाँधी दर्शन में आर्थिक दृष्टि से सर्वोदयी विचारधारा गाँधीवादी व्यवस्था के विकसित रूप का प्रतिबिम्ब हैं। सर्वोदय का सीधा अर्थ है सबका उदय। दक्षिण अफ्रीका में गाँधी जी ने रस्किन की पुस्तक ''अन टू दिस लास्ट' ' का गुजराती अनुवाद "सर्वोदय " शीर्षक से प्रकाशित किया। सर्वोदय शब्द मे सर्वभूतहितता की भारतीय कल्पना, सुकरात की सत्य साधना, बाइबिल से प्रभावित रस्किन की अन्त्योदय की अवधारणा, सब एक साथ समन्वित है। 1838 में सेवा संघ की ओर से जो मासिक पत्रिका निकाली, उसका नाम भी ''सर्वोदय " रखा। इसका उद्देश्य गाँधीवादी दर्शन का विश्लेषण करना था। सर्वोदय के सक्रिय नेताओं में विनोबा भावे, जय प्रकाश नारायण, शंकरराव देव, आचार्य कृपलानी आदि अग्रगण्य रहे।

गाँधी जी ने "सर्वोदय " के द्वारा सबका उदय, सबका उत्कर्ष और विकास होने की परिकल्पना की। गाँधी जी ने इसी सर्वोदय को आर्थिक दर्शन का आधार बनाया। सर्वोदय का लक्ष्य है आध्यात्मिक उन्नति एवं जीवन शुद्धि। इसमें सम्पूर्ण विश्व और प्रत्येक प्राणी का ध्यान रखा जाता है और 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना रहती है। सर्वोदय मानवीय विभुति में विश्वास करता है। फल निरपेक्ष कर्तव्य हमारा धर्म है। गाँधी जी सर्वोदय को अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र और धर्मशास्त्र से अलग नहीं मानते। वे कहते हैं कि मानव जीवन को राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक खानों में बांटने का कोई अर्थ नहीं होता। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि मैं नीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र में कोई अंतर नहीं करता अर्थशास्त्र किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के कल्याण में बाधा डालता है, अनैतिक हैं और इसलिए पाप पूर्ण है। जो अर्थशास्त्र अनुमति देता है कि एक देश दूसरे देश को लूट ले, वह अनैतिक हैं।

सर्वोदय की भावना का विकास:

गाँधी जी ने रस्किन द्वारा लिखित पुस्तक ''अन टू दिस लास्ट' ' से तीन बातें सीखी

I. सबकी भलाई में व्यक्ति का भला हैं,

II. सभी व्यक्तियों को आजीविका का आवश्यकता होती है। वकील के काम का एवं नाई के काम का मूल्य एक समान है क्योंकि दोनों को आजीविका कमाने का अधिकार है,

III. मजदूरों एवं किसानों का जीवन ही सच्चा जीवन है।

रस्किन की इस पुस्तक से प्रभावित होकर गाँधी जी ने इसमें वेदान्त, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, इसाई दर्शन तथा थोरो के विचारों का समन्वय करते हुए सर्वोदय पुस्तक की रचना की। गीता, उपनिषदों एवं जैन दार्शनिक ग्रंथों में भी गाँधी जी ने सर्वोदय की भावना का दिग्दर्शन किया। निम्नलिखित श्लोक भी सर्वोदय की भावना को व्यक्त करता हैः

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्चन्तु मां कश्चिच्द् दुःख भागभवेत्।

सर्वोदय का समाज दर्शन

सर्वोदय का समाज दर्शन सांस्कृतिक पुनरोत्थान पर आधारित है, वस्तु की अपेक्षा मानव का मूल्य अधिक है। 'सहयोग एवं स्वावलम्बन' इसके मूल तत्व हैं। इसका मूल उद्देश्य मानव जीवन को सुखी बनाना है। यह स्वार्थ और प्रतिद्वन्दिता से हट कर मानव के सामाजिक जीवन में प्रेम, त्याग, संतोष आदि बातों का समर्थन करता है। अतः सर्वोदय का समाज दर्शन का केन्द्र बिन्दु मानव है, जिसे सुखी देखने के लिए गांधी जी ने प्रेम, त्याग, संतोष आदि को जीवन में आवश्यक बतलाया।

सर्वोदय के मूलाधार तत्व

गाँधी जी ने अपने "सर्वोदय" की कल्पना का मूलाधार निम्नांकित तीन तत्वों को माना। ये तत्व है- अहिंसा, आर्थिक तथा राजनीतिक विकेन्द्रीकरण एवं ग्राम स्वावलम्बन।

अहिंसा - गाँधी जी ने सर्वोदय की आधारशिला हिंसक समाज पर न रख कर अहिंसक समाज पर रखने की वकालत की।

आर्थिक तथा राजनीतिक विकेन्द्रीकरण - अहिंसा के साथ-साथ सर्वोदय सभी शक्तियों का लोकतांत्रिक ढंग विकेन्द्रीकरण चाहता है, क्योंकि शासन की शक्तियां अधिक लोगों के हाथों में रहने से जनता का हित होगा और शोषण की सम्भावना कम होगी। इसलिए गाँधी जी ने उपभोग से वितरण तक की स्थितियों में भी विकेन्द्रीकरण को स्वीकार किया, ताकि समाज का आर्थिक विकास हो।

ग्राम स्वावलम्बन - सर्वोदय का तीसरा तत्व ग्राम स्वावलम्बन है। समस्त समाज के उत्थान के लक्ष्य को स्वीकार करते हुए गांधी जी ने ग्रामोदय को प्राथमिकता दी, क्योंकि उनकी दृष्टि में गांव शहर से अपेक्षाकृत पिछड़ा है। गाँधी जी के अनुसार गांव उत्थान का अर्थ है राष्ट्र का उत्थान। इस प्रकार बहुसंख्यक गरीबों के उत्थान का अर्थ है देश का उत्थान। इसे उन्होंने सर्वोदय अर्थशास्त्र कहा। गाँधी जी ने अमीर और गरीब दोनों के लिए मानव दर्शन दिया है अमीरों का कर्त्तव्य हो जाता है कि वे अपनी सम्पत्ति या शक्ति का प्रयोग सामाजिक उत्थान के लिए करें। तभी उनका उत्थान सम्भव है। उन्होंने हृदय परिवर्तन, स्वचिंतन, स्वशासन के द्वारा एक नये प्रकार की अर्थव्यवस्था का संयोजन किया। इसी को सर्वोदय अर्थशास्त्र कहा।

इस सर्वोदय अर्थशास्त्र में गाँधी जी ने प्रत्येक व्यक्ति को अपने श्रम से उत्पादन करने पर बल दिया। उन्होंने कहा कि उत्पादन के साधन पर प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार होगा। कोई व्यक्ति यंत्र का प्रयोग दूसरे व्यक्ति के शोषण के लिए नहीं करेगा। मजदूर और मालिक के सम्बन्धों पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा कि हर व्यक्ति की कार्य प्रणाली में दोनों समन्वित होंगे। दोनों गुणों का मेल होगा। मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाले उद्योगों का संचालन पंचायती व्यवस्था द्वारा होगा। उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन होगा जो स्वास्थ्यवर्धक, जीवनोपयोगी तथा उत्पादन में सहयोगी हो। प्रत्येक व्यक्ति उत्पादित वस्तुओं का आवश्यकतानुसार उपभोग करेगा और शेष समाज के लिए छोड़ देगा।

सर्वोदय समाज की व्यवस्था

गाँधी जी ने सर्वोदय समाज की व्यवस्था निम्नलिखित बिन्दुओं पर आधारित मानी है:

I. समस्त भूमि पर किसी का भी स्वामित्व न होकर यह ईश्वरीय वस्तुओं के समान सबको आवश्यकतानुसार वितरित होगी।
II. सर्वोदय समाज में मजदूर वर्ग और किसान वर्ग को प्रमुखता जायेगी।
III. उत्पादन करने वालो को जमीन पर अधिकार दिया जायेगा।
IV. प्रजातंत्र को संचालन कुछ व्यक्तियों के द्वारा न होकर प्रत्येक नागरिक के द्वारा प्रारम्भ करना होगा। इसे गांव से प्रारम्भ करना होगा।
V. सर्वोदय में किसी भी पार्टी का नाम नहीं होगा।
VI. इसमें सर्वदलीय सहयोग होगा।
VII. संसद में भी पार्टी का प्रतिनिधित्व न होकर राष्ट्र का प्रतिनिधित्व होगा।

VIII. सर्वोदय में ग्राम पंचायतों के द्वारा शासन चलाया जायेगा।

IX. इसमें चुनाव पद्धति का अभाव होगा।

गाँधी जी ने सर्वोदय आन्दोलन के तीन अंग बताये - भूदान, ग्राम दान और सम्पति दान। सर्वोदय आन्दोलन में मानते थे। सर्वोदय के अन्तर्गत आत्म दर्शन का आधार 'सबकी भलाई में अपना भला' या 'सबका अधिकतम सुख' है। सर्वोदय विचार में त्याग के द्वारा ह्रदय परिवर्तन, तर्क के द्वारा विचार परिवर्तन, शिक्षा के द्वारा संस्कार परिवर्तन एवं पुरूषार्थ के द्वारा स्थिति परिवर्तन के माध्यम से क्रांति करने पर बल दिया गया है। सर्वोदय का लक्ष्य है कि समाज में प्रत्येक को समान काम, आराम व मनोरंजन हासिल हो और व्यक्ति अपना सर्वांगीण विकास कर सके। व्यापार का आधार समाज सेवा होगा।

गाँधी जी ने सर्वोदय में कई रचनात्मक कार्यक्रम निर्धारित किये। इनमें खादी, ग्रामोद्योग, नशाबंदी, जातिभेद, अस्पृश्यता निवारण, साम्प्रदायिक एकता, ग्रामसफाई, नई तालीम, स्त्री-पुरूष की समानता, प्रांतीय संकीर्णता का निवारण, आर्थिक समानता, खेती की उन्नति, आदिम जाति सेवा, विद्यार्थी संगठन, दुखियों की सेवा, बुनियादी शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, स्त्री शिक्षा, राष्ट्र भाषा और प्रान्तीय भाषा, स्वास्थ्य के नियमों की शिक्षा, किसान, मजदूर तथा आदिवासी कल्याण, कुष्ट रोगी कल्याण तथा पशु सुधार आदि। एक समाज निर्माता, एक युग दृष्टा और एक व्यावहारिक अर्थशास्त्री के गुण गाँधी जी के रचनात्मक कार्यक्रमों में है।

इन कार्यक्रमों से स्पष्ट है कि गाँधी जी भौतिक जीवन में आमूल परिवर्तन चाहते हैं। व्यक्ति का सर्वोत्कृष्ट विकास और व्यक्ति का सही अर्थ में सामाजिक प्राणी और विवेकपूर्ण प्राणी होना तभी सम्भव है, जब व्यक्ति अपने छोटे-छोटे स्वार्थो से ऊपर उठे और अपने सुख-दुख में देखने का प्रयास करे। यही गाँधी जी की सामाजिक नीति है। सर्वोदय अर्थशास्त्र न केवल एक सैद्धान्तिक विचार है, अपितु एक सामाजिक शास्त्र भी है। इस व्यवस्था में ग्राम जीवन को अधिक प्रोत्साहन मिलेगा, क्योंकि अन्न, कच्चा माल या यों कहें कि मनुष्य की जीवनदायनी वस्तुओं का उत्पादन गाँव में ही होता है। सभ्यता का इतिहास इस बात का साक्षी है कि सारी सभ्यता व संस्कृति प्रकृति की गोद में पनपी है। सारी अर्थव्यवस्था की बुनियाद ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आधरित है। इसलिए ग्रामीण जीवन के पहलओंु आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक का संवर्धन एवं संरक्षण बहुत आवश्यक है। परस्परावलम्बी व्यवस्था में व्यक्ति प्रत्येक कार्य करने में समर्थ होगा। कोई काम छोटा-बड़ा नहीं होगा। इस संकल्प के साथ व्यक्तियों में पारस्परिक उत्पादन की व्यवस्था होगी। जब कोई कार्य छोटा बड़ा नहीं होगा तो किसान, मजदूर, नाई, वकील सब समान होंगे। यह मान्यता सारे समाज में मान्य

होगी। आज की जो पूंजीगत, श्रमगत, व्यवस्थागत भिन्नताएँ हैं, उन्हें समाप्त किया जाएगा, तभी इस देश में सामाजिक-आर्थिक समानता स्थापित होगी। "

सर्वोदय में गांधी जी ने सब प्रकार से उदय अर्थात् 'सर्वागीण विकास' के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। यह ठीक है कि 'सर्वागीण विकास' की कल्पना दृष्टिभेद से भिन्न-भिन्न होगी। जैसे विशुद्ध भैतिकवादी के लिए 'आवश्यकता की वृद्धि की पूर्ति के राग में रत रहना' विकास माना जाएगा जबकि विशुद्ध अध्यात्मवादी के लिए ब्रह्या की प्राप्ति या मोक्ष प्राप्ति ही परम पुरुषार्थ है। इन दो विचारों को मोटे तौर पर क्रमशः 'अभ्युदय' एवं 'निःश्रेयस' संज्ञा दी जा सकती है। यहाँ किसी एक की अपेक्षा नहीं बल्कि दोनों की अपेक्षा है। 'अभ्युदय' से दैहिक उन्न्ति का बोध होता है, इसलिए 'उदय' शब्द आया है। इसका अर्थ है सर्वोदय विचार के अनुसार दैहिक, बौद्धिक, आर्थिक, सामाजिक, वैज्ञानिक विकास निःसंशय श्रेयस श्रेष्ठ है, किन्तु 'निःश्रेयस' के बिना ये सब अधूरे हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार सर्वोदय की विचारधारा का भारतीय राजनीतिक, आर्थिक व्यवस्था के संदर्भ में महत्वपूर्ण स्थान है। चूंकि यह एक विशुद्ध भारतीय चितन धारा है और इसके विविध विचार भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में व्यक्त किये गये हैं, उनका दार्शनिक, नैतिक तथा ऐतिहासिक आधार पूर्णतः भारतीय सांस्कृतिक परम्पराओं परिस्थितियों के अनुकूल है। अतः ग्रामीण जीवन एवं समस्त मानव जीवन के उत्थान एवं विकास के लिए गाँधी जी के आर्थिक दर्शन का अपना महत्व है।

सन्दर्भ सूची

1. मार्शल, पिंरसिपल ऑफ इकनॉमिक्स, खण्ड 1, पृ. सं. 1
2. स्पीचेज ऑफ महात्मा गाँधी, द्वितीय परिशिष्ट, पृ.सं. 40.
3. मिशनरी कॉफ्रेंस, मद्रास, 14 फरवरी 1916 को प्रदत्त भाषण, इकनॉमिक्स ऑफ खादी।
4. रॉल एरिक, हिस्ट्री ऑफ इकनॉमिक थॉट, पृ. 505-6 .
5. पी.सी. जैन, व्यवसाय सरकार एवं समाज, खण्ड 'अ' पू.स. 63.
6. रस्किन, अनटू दिस लास्ट, पू.स. 2.
7. गाँधी एवं स्टालियन, पृ.सं. 146 .

8. प्रकाश नारायण नाटानी, गांधी दर्शन मीमांसा, जयपुर, 2000, पृ.सं. 155.
9. गाँधी सर्वोच 15-20 इंडिया 13 अक्टूबर 1921.
10. प्रदीप कुमार पाण्डेय, गाँधी का आर्थिक एवं सामाजिक चिंतन
11. विनोबा भावे, साम्य-सूत्र (सर्वसेवा संघ प्रकाशन 1959) पृ.सं. 6.
12. गीता बोध मंगल प्रभात.
13. गाँधी, हरिजन सेवक, 2 अगस्त, 1996.
14. प्रताप सिंह, गाँधी जी का दर्शन पृ. 71.
15. स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी, पृ.सं. 336.
16. हरिजन, 24 दिसम्बर, 1938 पृ. सं. 393.
17. हरिजन, 9 फरवरी, 1934.
18. हरिजन, 1 फरवरी, 1942.
19. हरिजन, 27 जनवरी, 1940.
20. यंग इंडिया, 7 अक्टूबर, 1921.
21. यंग इंडिया, 13 अक्टूबर, 1921.
22. यंग इंडिया, 6 अप्रैल, 1922.
23. यंग इंडिया, 27 अक्टूबर, 1921 .
24. यंग इंडिया, 29 सितम्बर, 1921.
25. यंग इंडिया 1 अक्टूबर, 1921.